हरिद्वार : देवभूमि उत्तराखंड का प्रवेश द्वार

डॉ. अनिल शर्मा
रुड़की

जीवनदायिनी, मोक्ष प्रदायिनी पतित पावनी गंगा नदी के दाहिने तट पर बसे हुए हरिद्वार को पुरातत्वविद् करीब पौने चार हजार साल पूर्व की मानव बस्ती के रूप में स्वीकार करते हैं। भौगोलिक दृष्टि से यह $29^0 58'$ उत्तरी अक्षांश तथा $78^0 10'$ पूर्वी देशांतर पर स्थित है। मां गंगा के उद्गम स्थल गोमुख–गंगोत्री से करीब 275 किलोमीटर नीचे समतल में मां गंगा की धारा किनारे बसा आज का हरिद्वार जहां एक ओर उत्तरांचल के चार पवित्र धामों के लिए प्रवेश द्वार है, वहीं पुराणों में चर्चित गंगाद्वार के नाम से प्रख्यात यह नगर देव नदी मां गंगा के लिए सर्वप्रथम समतल भूमि प्रदान करता है। शिवालिक पर्वत माला के छोर पर बिल्व पर्वत और नील पर्वत के मध्य लंबाई में बसा यह छोटा सा खूबसूरत नगर अपनी प्राकृतिक सुषमा, मनोहारी गंगा तटों, यहां होने वाली पूजा आरतियों के नयनाभिराम दृश्यों, शिवालिक की वन और पहाड़ों वाली प्राकृतिक विरासतों, मंदिरों, आश्रमों और अखाड़ों के कारण हरिद्वार प्राचीनकाल से व्यापारियों, घुमक्कड़ों, तीर्थयात्रियों और मां गंगा के भक्तों को अपनी ओर आकर्षित करता है, जहां प्रत्येक 12वें वर्ष पूर्णकुंभ एवं छठें वर्ष अर्द्धकुंभ के पवित्र स्नान होते हैं और करोड़ों लोग स्नान कर पुण्य लाभ प्राप्त करते हैं।

हरिद्वार की असली पहचान गंगा है। कहीं से भी सच्चे हृदय से जिसका नामोच्चार कर लेना ही सशरीर विष्णु लोक जाने के लिए पर्याप्त है ऐसी पुण्यतोया गंगा के बिना हरिद्वार कुछ भी नहीं। विष्णु पदी गंगा, ब्रह्मा के कमंडल और शिव की जटाओं से निकली गंगा, त्रिभुवनतारिणी और कलिकल्मज निवारिणी गंगा के कारण ही हरिद्वार का अस्तित्व है। गंगा मैया ने हरिद्वार को ही नहीं अपितु इस देश के न जाने कितने शहरों को तीर्थ बना दिया है।

त्रेतायुग में मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में जगत विख्यात श्री राम के पुरखे और अयोध्या के महाराज भगीरथ जब गंगा मैया को अपने पुरखों के उद्धार के लिए इस धराधाम पर लाए तो मैया ने शिव की अलकों या जटाओं रूपी पर्वत उपत्यकाओं से निकलकर सबसे पहले हरिद्वार के ही मैदानों को स्पर्श किया। यह अद्भुत वरदान हरिद्वार को ही मिला कि वह प्रत्येक जन–जन में उद्धार भूमि बन कर बसा हुआ है। वह भारतीयों का अटल विश्वास बना हुआ है, जिसके चलते उस तक पहुंचकर गंगा दर्शन, गंगा स्तवन, गंगार्चन और गंगा स्नान करना ही मोक्ष की सीढ़ी चढ़ने का पर्याय हो गया है। गंगा सुरसरि है और स्वर्ग से अवतरित होकर पहले पहल उसने हरिद्वार को ही छुआ है। इसीलिए हरिद्वार से होकर ही आस्थावानों ने स्वर्ग के मार्ग खोजें और वह उन्हें मिले भी। यही कारण है कि हरिद्वार को महाभारतकार महर्षि वेदव्यास ने गंगाद्वार कहकर बुलाया। महाभारत के वन पर्व में उन्होंने लिखा कि गंगाद्वार में ही भगवान शिव ने गंगा को अपनी जटाओं में धारण किया था ताकि लोक रक्षा हो सके –

एतस्याः सलिलं मूर्ध्निवृषांकः पर्यधारयत्।
गंगाद्वारे महाभाग येन लोकस्थितिर्भवेत्।।

आगे महाभारतकार महर्षि वेदव्यास गंगापुत्र भीष्म पितामह से यह भी कहलवाते हैं कि केशव के समान कोई देव नहीं, ब्रह्मवेत्ताओं के समान श्रेष्ठ जन नहीं और गंगा के समान कोई श्रेष्ठ तीर्थ नहीं है –

न गंगासदृश तीर्थ, न देव केशवात्परः।
ब्राह्मणेभ्यः नरंनास्ति एवमाहपितामहः।।

इसी क्रम में गरूड़ पुराणकार ने तो हरिद्वार को गंगा की पावनता के ही कारण मोक्षदायिनी सप्तपुरियों में तीसरे स्थान पर रखकर मायापुर नाम दिया –

अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवंतिका।
पुरी द्वारावतिश्चैव सप्तैता मोक्षदायिका।।

स्कंदपुराण के काशीखंड में तो स्पष्टतः कहा गया है कि सतयुग में सभी तीर्थ पुण्यप्रद थे। त्रेतायुग में पुष्कर तथा द्वापर में कुरूक्षेत्र पुण्यदायी थे। पर कलियुग में तो केवल गंगा ही पुण्यदा है –

कृते तु सर्व तीर्थानि त्रेतायां पुष्करं परं,
द्वापरे तु कुरूक्षेत्रं कलौ गंगेव केवलम्।

आज हरिद्वार के उपनगर के रूप में विख्यात कनखल दरअसल इसका ज्येष्ठ बंधु है। क्योंकि तब हरिद्वार बस्ती के रूप में नहीं तपोवन के रूप में था, बस्ती तो कनखल था। गंगा मैया ने पहले कनखल को गोद खिलाया। वह दक्ष प्रजापति की राजधानी तथा दक्षकन्या महासती का मायका बना। सम्राट विक्रमादित्य ने अगर हरिद्वार के तट पर ब्रह्मकुंड की सीढ़िया बनवाई तो उन्हीं के काल के महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य 'मेघदूतम्' में हरिद्वार का नहीं अपितु कनखल का उल्लेख किया है –

तस्माद्गछेरनुकनखलं शैलराजवतीर्णा,
जह्नोकन्यां सगरतनय स्वर्गसोपानपंक्तिम्,
गौरीवक्त्रकाभृकुटि रचनां या विहस्यैव फेनैः
शम्भोः केशग्रहणमकरोदिन्दि लग्नोर्मिहस्ता ।।

हरिद्वार देवभूमि की ड्यौढ़ी है, द्वार है और आज तो भारत के नवसृजित राज्य उत्तराखंड का तोरणद्वार भी है। दुनियाभर के शैव और वैष्णव अगर हरिद्वार से होकर ही चार धाम जाते हैं तो पतित पावनी गंगा मैया यहीं से होकर ही शेष देश को आशीष बांटने जाती है। केदारनाथ तक पहुंचने वाले 'शैवों' के लिए यह 'हरिद्वार' है तो बद्रीनाथ तक पहुंचने वाले 'वैष्णवों' के लिए यह 'हरिद्वार' हो जाता है। आज हरिद्वार नगर सोचता होगा कि गंगा मैया न होती तो कौन पूछता उसे? गंगा थी तो यह था, गंगा है तो यह है और गंगा जब तक रहेगी, तब तक यह भी रहेगा।

हरिद्वार से अनेक पुराचर्चाओं का घनिष्ठ संबंध है। ऐसी ही एक पुराकथा के अनुसार भगवान राम के पूर्वज इक्ष्वाकु वंश के महाराज सगर ने अश्वमेघयज्ञ का आयोजन किया था। देवराज इंद्र को उनके इस यज्ञ और विजय अभियान से ईर्ष्या हुई तो उसने दिग्विजय के छोड़े गए अश्व को चोरी से पकड़कर हरिद्वार में ही कपिलमुनि के आश्रम में लाकर बांध दिया। महाराज सगर के साठ हजार पुत्र अश्व को खोजते हुए जब कपिलाश्रम आए तो यहां अश्व को बंधा देखकर तपस्या में रत मुनि को बुरा–भला कहने लगे। सारी घटना से अनिभज्ञ मुनिवर ने जब आंखे खोली तो उन्हें सगर पुत्रों की विवेकहीनता पर बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने उन सबको शापाग्नि से भस्म कर दिया। कालांतर में महाराज सगर के वंशज भगीरथ ने अपने पुरखों के उद्धार के लिए पतित पावनी मां गंगा को धरती पर लाने का संकल्प लेकर अथक परिश्रम किया। उनकी तपस्या के फलस्वरूप गंगा हरिद्वार के भू–भाग को पावन करती हुई अपने उद्गम से ढ़ाई हजार किलोमीटर की यात्रा कर गंगा सागर तक पहुंची। गंगा के हिमशीतल स्पर्श से भस्म हुए सगर पुत्रों को मोक्ष मिला।

इसी कथा से प्रेरित होकर ही आज सारा आस्तिक हिन्दू समाज अपने परिवार के मृतकों की मुक्ति के लिए अस्थि–विसर्जन हेतु हरिद्वार तक ही आता है और पावन गंगा तटों पर अस्थियां (फूल) विसर्जित करके मान लेता है कि मृतक को मोक्ष की प्राप्त हो गई। यद्यपि ऐसी मान्यता है कि सगर पुत्रों को मोक्ष प्राप्ति गंगा सागर स्थित कपिलाश्रम में हुई थी क्योंकि कपिल मुनि का आश्रम यूं तो गंगा सागर में ही है, पर अनेक लोग कनखल उपनगरी में स्थित महानिर्वाणी अखाड़े के कपिल मंदिर को ही कपिलाश्रम की मान्यता देते हैं। हिन्दू समाज का एक बड़ा वर्ग आज भी अपने परिजनों की अस्थियों को कनखल के गंगा तट पर ही प्रवाहित करके संतुष्ट होता है।

हरिद्वार का ज्येष्ठ भ्राता उपनगर कनखल ब्रह्मा के पुत्र प्रजापति दक्ष की राजधानी रहा है। दक्ष की एक पुत्री सती ने अपने पिता की इच्छा के विपरीत शिव से प्रेम विवाह किया था। प्रजापति दक्ष नहीं चाहते थे कि उनकी बेटी शरीर पर चिताभस्म लगाकर मृगचर्म लपेटने वाले, भूत–पिशाचों के बीच रमने वाले औघढ़ शिव से ब्याह करें। लेकिन ऐसा हो जाने पर वे सती से कम, शिव से अधिक नाराज हो गए।

एक बार प्रजापति दक्ष ने कनखल में एक विराट यज्ञ का आयोजन किया, पर उसमें शिव को आमंत्रित नहीं किया। उधर सती को जब पता चला कि उनके पिता के घर भव्य यज्ञ का आयोजन है तो वह शिव के मना करने पर भी बिना बुलाए अपने पिता के घर पहुंच गई। कनखल में आकर सती ने देखा कि उसके पति देवाधिदेव महादेव के लिए दक्षराज ने यज्ञभाग तक सुरक्षित नहीं रखा है। उल्टे सती को देखकर दक्ष ने भरी यज्ञ सभा में शिव को भला–बुरा कह डाला। अपने और पति के इस अपमान से व्याकुल सती ने योगाग्नि से अपने आपको भस्म कर डाला।

बाद में शिव के गण वीरभद्र ने अपने साथियों के साथ–दक्ष के यज्ञ का विध्वंस कर दिया और दक्ष का सिर काटकर यज्ञकुंड में ही फेंक दिया। सारा समाचार पाकर जब शिव यज्ञस्थली कनखल आए तो उन्होंने सती का अधजला शव देखा। सती के अधजले शव को अपने कंधे पर रखकर उद्विग्न शिव निकल पड़े। शव कंधे पर होने के कारण शोकाकुल शिव की अकुलाहट और उद्विग्नता बढ़ती जा रही थी। इस स्थिति से बचने के लिए भगवान विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र से सती के शव के टुकड़े–टुकड़े कर दिए। सती के शरीर के यही टुकड़े जहां–जहां गिरे वहां–वहां बाद में शक्तिपीठों की स्थापना की गई।

महामाया सती के शव का ह्रदय और नाभिस्थल हरिद्वार के भू–भाग पर गिरा था। इसीलिए हरिद्वार का एक नाम मायापुर पड़ा। आज भी पुरानी बस्ती के बीच पंचदशनाम जूना अखाड़े की व्यवस्था में माया देवी का मंदिर रक्षित और पूजित है। वास्तव में माया ही हरिद्वार की अधिष्ठात्री है।

बाद में जब शिव की उद्विग्नता शांत हुई तो उन्होंने दक्ष की पत्नी के अनुरोध पर दक्षराज के सिर कटे धड़ पर बकरे का सिर लगा दिया और इस तरह दक्ष को पुनर्जीवन दे दिया। तब कृतज्ञ दक्ष ने यज्ञ स्थल पर ही लिंग रूप में भगवान शिव की स्थापना की। आज भी दक्षेश्वर महादेव का मंदिर हरिद्वार के उपनगर कनखल में दक्ष यज्ञ की कथा याद दिलाता है। यह मंदिर श्री पंचायती अखाड़ा महानिर्वाणी द्वारा संरक्षित एवं पूजित है। यज्ञ विध्वंस के बाद सती के मायके वालों ने दामाद की प्रसन्नता के लिए उन्हें अपने क्षेत्र में ऐसी प्रतिष्ठा दी कि नील पर्वत पर नीलेश्वर और गौरी–शंकर, बिल्व पर्वत की तलहटी में बिल्वकेश्वर, कनखल में दक्षेश्वर और तिलभांडेश्वर, ऋषिकेश मार्ग पर वीर भद्रेश्वर और हरकी पौड़ी की जल धारा में गंगाधर महादेव का पूजन अर्चन प्रारंभ हो गया।

रामायण काल में कहा जाता है कि ब्रह्मवेत्ता रावण को मारने के बाद श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण आदि के साथ ब्रह्म हत्या के पाप का प्रायश्चित करने के लिए हरिद्वार के ही गंगातट पर

आए थे। यहां आकार उन्होंने गंगा स्नान और तर्पण आदि करके फिर आगे देव प्रयाग में जाकर तपस्या की थी। लक्ष्मण ने ऋषिकेश से कुछ आगे जाकर तप किया। उनके नाम से उक्त स्थान लक्ष्मण क्षेत्र या लक्ष्मण झूला कहलाया। महाभारत काल की तो कई कथाएं हरिद्वार और गंगा से जुड़ी हुई हैं। भीष्म का गंगा पुत्र नाम सर्वविदित ही है।

हरिद्वार की कहानी से जैसे गंगा मैया अलग नहीं हो सकती वैसे ही अलग नहीं किए जा सकते कुंभ और अर्द्धकुम्भ पर्व। गंगा स्थानों के विभिन्न पर्व जैसे बैसाखी, संक्रातियों के पर्व, चंद्र–सूर्य ग्रहणों के पर्व, पूर्णिमा–अमावस्या–एकादशी के स्नान पर्व और कांवड जैसे लक्खी मेले से हरिद्वार को अलग करके नहीं देखा जा सकता। साधु संयासियों के साथ उनके मठ–आश्रम तथा तीर्थ पुरोहित नाम का वह ब्राह्मण वर्ग, जिसके बिना तीर्थ की कल्पना नहीं की जा सकती, भी हरिद्वार की रोचक कहानी के हिस्से हैं।

वर्ष 1915 में महात्मा गांधी हरिद्वार में कुंभ का मेला देखने आए थे। उन्होंने अपनी आत्मकथा में इसका वर्णन करते हुए लिखा है –

"कुम्भ का दिन आया, मेरे लिए वह धन्य घड़ी है। मैं यात्रा की भावना से हरिद्वार नहीं गया था। तीर्थ क्षेत्र में पवित्रता की शोध में भटकने का मोह मुझे कभी नहीं रहा। किन्तु 17 लाख लोग पाखंडी नहीं हो सकते जो कुंभ मेले में आए थे। इनमें असंख्य लोग पुण्य कमाने के लिए, शुद्धि प्राप्त करने के लिए आए थे, इसमें मुझे कोई शंका न थी। यह कहना असंभव नही तो कठिन अवश्य है कि इस प्रकार की श्रद्धा आत्मा को किस हद तक ऊपर उठाती होगी।"

हरिद्वार की कहानी बहुत लंबी है। प्रत्येक काल की कोई न कोई कथा हरिद्वार से जुड़ी है। हरिद्वार के ऐतिहासिक दर्शनीय स्थलों का संक्षिप्त वर्णन करते हुए हम यहां से किसी न किसी प्रकार जुड़े रहे महापुरूषों का नामोल्लेख भी करना चाहेंगे।

मायादेवी मंदिर – मायादेवी मंदिर नगर के बीचो–बीच स्थित है। माया देवी हरिद्वार की अधिष्ठात्री देवी है।

मंसादेवी मंदिर – हरिद्वार में शिवालिक पर्वत श्रृंखला के एक शिखर पर मंसादेवी मंदिर स्थित है। यह मंदिर रज्जूमार्ग से जुड़ा है।

चंडी देवी मंदिर – हरिद्वार के एक छोर पर मंसादेवी और दूसरे छोर पर चंडी देवी के मंदिर स्थित है। यह मंदिर भी रज्जू मार्ग से जुड़ा है।

हर की पौड़ी – यह पवित्र घाट राजा विक्रमादित्य ने अपने भाई भर्तहरि की स्मृति में बनवाया था। यह पवित्र स्नान घाट ब्रह्मकुंड के नाम से भी जाना जाता है। कुंभ पर्व के मुख्य स्नान व अन्य पर्व आदि के स्नान यहीं पर सम्पन्न होते हैं। यहां पर स्नान का विशेष महत्व है।

बिल्वकेश्वर महादेव मंदिर – शिव के प्रमुख स्थानों में एक विल्केश्वर महादेव का मंदिर है। इस मंदिर के निकट स्थित बिल्व पर्वत की तलहटी में हिमालय की पुत्री शैलजा उमा गौरी ने भगवान शिव की प्राप्ति के लिए घोर तपस्या की थी।

दक्षेश्वर महादेव मंदिर – हरिद्वार के उपनगर कनखल में स्थित दक्षेश्वर महादेव मंदिर को शास्त्रों में मुख्य तीर्थ स्थल कहा जाता है। कनखल, भगवान शंकर की ससुराल है।

सुरेश्वरी देवी मंदिर – बी.एच.ई.एल. के निकट रानीपुर वन विभाग चैक पोस्ट से 2 कि.मी. सुरकूट पर्वत पर भगवती सुरेश्वरी का मंदिर स्थित है।

सप्त ऋषि आश्रम – जब गंगा जी पृथ्वी पर उतरी तो हरिद्वार के निकट सप्त ऋषियों के आश्रम एक ही स्थान पर देख रूक गई और यह निर्णय नहीं कर पाई कि किस ऋषि के सामने से प्रवाहित हो, क्योंकि वह किसी ऋषि का कोप भाजन नहीं बनना चाहती थी। देवताओं के कहने पर गंगा देवी सात धाराओं में विभक्त होकर बही। यह क्षेत्र सप्त ऋषि क्षेत्र कहलाता है।

गौरी–शंकर मंदिर – हरिद्वार–नजीबाबाद मार्ग पर स्थित प्राचीन गौरी–शंकर मंदिर पार्वती के प्रेम का प्रतीक है।

भीम गोड़ा – महाभारत के एक प्रसंग के अनुसार परमवीर भीमसैन ने घुटना (गोडा) मारकर कुंड बनाया था यह नगर के बीचो–बीच स्थित हैं।

भारत माता मंदिर – स्वामी सत्यमित्रानंद गिरी जी महाराज द्वारा स्थापित यह आठ मंजिली मंदिर सप्तसरोवर मार्ग पर स्थित है। यहां पर न केवल सभी धर्मों के देवी–देवताओं की अपितु राष्ट्र के शहीदों एवं महापुरूषों की मूर्तियां भी स्थापित है।

ऐतिहासिक गुरूद्वारा – बाबा दरगाह सिंह के डेरे के नाम से सिक्खों का ऐतिहासिक गुरूद्वारा है, यह सती घाट गंगा के तट पर स्थित है।

बी.एच.ई.एल. – भारत के औद्योगिक क्षेत्रों में नवरत्न के रूप में स्थापित यह संयंत्र हरिद्वार के रानीपुर क्षेत्र में स्थित है। इस कारखाने द्वारा भारत के विद्युत व अन्य क्षेत्रों में अत्यंत सराहनीय योगदान किया जा रहा है।

हरिद्वार की इस परम पावन धरती पर आरंभ से ही महापुरूषों का आगमन, निवास और साधना तपस्या का दौर चलता रहा है। अनेक तपस्वी, साधु–संत, धर्माचार्य, राजपुरूष, समाजसेवी, साहित्यकार, कलाकार और देश–विदेश के पर्यटक हर युग में हरिद्वार तक आए। न केवल आए बल्कि यहां से विश्वकल्याण, शान्ति और मानवता का संदेश लेकर गए। आद्यजगद्गुरू श्री शंकराचार्य, गुरू नानकदेव, गुरू अमरदास, महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी श्रद्धानंद, महामना पंडित मदन मोहन मालवीय, पं. माखनलाल चतुर्वेदी, श्री आनंदमयी मां, आचार्य पं. श्रीराम शर्मा, ब्रह्मचारी देवेन्द्र स्वरूप, आचार्य पंडित किशोरी दास वाजपेयी, कविवर जगन्नाथदास रत्नाकर, कविवर त्रिलोचन आदि अनेक महापुरूषों ने हरिद्वार की पावन भूमि को अपने सत्कार्यों से गौरव गरिमा देकर इसकी कीर्ति को विश्व के अन्य भागों तक पहुंचाया है।

वर्तमान में भी महामंडलेश्वर स्वामी सत्यमित्रानंद गिरी, आचार्य स्वामी, गणेशदास, स्वामी अवधेशानंद गिरी, रामानंदाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य, योग ऋषि स्वामी रामदेव, स्वामी चिदानंद मुनि सरस्वती, डॉ. प्रणव पंड्या आदि अनेक संत एवं मनीषी हरिद्वार की गौरव पताका संपूर्ण विश्व में फहरा रहे हैं।